International Journal of Sanskrit Research 2020; 6(1): 34-37

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2020; 6(1): 34-37
© 2020 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 15-11-2019
Accepted: 19-12-2019

डॉ0 दीप लता
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय
समरहिल, शिमला, हिमाचल प्रदेश, भारत।

Corresponding Author:
डॉ0 दीप लता
सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय
समरहिल, शिमला, हिमाचल प्रदेश, भारत।

राम–सीता का श्रेष्ठतम दाम्पत्य जीवन उत्तररामचरित नाटक के परिप्रेक्ष्य में

डॉ0 दीप लता

प्रस्तावना

संस्कृत नाटक–साहित्य में भवभूतिरचित उत्तररामचरित नाटक का विशिष्ट एवं महनीय स्थान है। इसलिए कहा गया है–

उत्तरेरामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते।

महाकवि भवभूति ने अपनी रचनाओं में माता–पिता, पति–पत्नी, भाई–भाई, पुत्र–पुत्री आदि के पारस्परिक सम्बन्धों का एक श्रेष्ठतम रूप प्रस्तुत किया है। इनके सभी नाटक प्रेम का शुद्ध रूप उपस्थित करते हैं। उनके नाटकों में नायक द्वारा कहीं भी एकपत्नी व्रत का अतिक्रमण नहीं किया गया है उनके सभी नाटक नीति तथा सदाचार की भावना से ओतप्रोत हैं। महाकवि भवभूति के सभी पात्र शिष्टता और सज्जनता की मूर्ति हैं जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण उनके पात्रों के आपसी व्यवहार से लक्षित होता है।

उत्तररामचरित नाटक में राम–सीता के दाम्पत्य प्रेम का आदर्श बहुत ही पवित्र तथा उच्च है। इस नाटक के प्रथम तीन अङ्कों में दाम्पत्य प्रेम का यह उज्ज्वल आदर्श पाठक के ध्यान को आकर्षित किए बिना नहीं रहता है। उनका दाम्पत्य प्रेम वासना शून्य है, वह विषयीलोक की वस्तु नहीं है, वह सदा एकरस बना रहता है ऐसा दाम्पत्य प्रेम दिन–प्रतिदिन बढ़ता है अर्थात् वृद्धावस्था में घटता नहीं प्रत्युत और भी अधिक बढ़ता है। उसमें हृदय सदैव विश्रान्ति प्राप्त करता है। ऐसा व्यक्ति धन्य होता है जिसे ऐसा दाम्पत्य प्रेम प्राप्त होता है। यथा–

अद्वैतं सुखदुःखयोरनुगतं सर्वास्ववस्थासु य–
द्विश्रमों हृदयस्य यत्र जरसा यस्मिन्नहार्यो रसः।
कालेनावरणात्ययात्परिणते यत्स्नेहसारे स्थितं
भद्रं तस्य सुमानुषस्य कथमप्येक हि तत्प्राप्यते।।[1]

भवभूति की दृष्टि में स्त्री भोग्यवस्तु नहीं, बल्कि गृहलक्ष्मी है वह घर में अपनी उपस्थिति से सर्वत्र सुख एवं शान्ति को लाती है यथा–

इयं गेहे लक्ष्मीरियम मृतवर्तिर्नयनयो–
रसावस्याः स्पर्षो वपुषि बहुलश्चन्दनरसः
अयं बाहुः कण्ठे शिशिरमसृणोमोक्तिक्सरः
किमस्या न प्रेयो यदि परमसह्यस्तु विरहः।।[2]

गृहस्थ जीवन में पति–पत्नी का सम्बन्ध अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। उत्तररामचरित के अनुसार दाम्पत्य जीवन श्रेष्ठतम एवं सर्वोत्तम माना गया है। राम का सीता के प्रति प्रेम उच्चकोटि का है। वह सीता को कभी कोई दुःख नहीं पहुँचाना चाहते थे। जब लक्ष्मण सीता को चित्रदर्शन करवाते हैं तो राम पूछते हैं कि कहाँ तक पहुँचे? तब लक्ष्मण कहते हैं, सीता की अग्नि–परीक्षा तक। राम कहते हैं, ''लक्ष्मण! शान्त हो जाओ।'' वह सीता के बारे में कहते हैं कि जन्म से ही पवित्र सीता के लिए अन्य पवित्र करने वाली वस्तुओं से क्या? अर्थात् पवित्र वस्तु को तीर्थ के जल एवं अग्नि द्वारा पवित्र करने की आवश्यकता नहीं होती। यथा–

उत्पत्ति परिपूतायाः किमस्याः पावनान्तरैः।
तीर्थोदकं च वह्निष्च नान्यतः शुद्धिमर्हतः।।[3]

राम और सीता के दाम्पत्य जीवन की ऐसी अनेक विशेषताएं हैं जिनका वर्णन उत्तररामचरित में पग–पग पर दृष्टिगोचर होता है। एक स्थान पर राम सीता को बीते हुए उन दिनों की याद दिलाते हुए कहते हैं कि हम दोनों का प्रेम ऐसा था कि कई प्रकार की बातें करते हुए पूरी रात व्यतीत हो जाती थी। अतीव अनुराग के कारण सारी रात कब बीत जाती थी हमें पता भी नहीं चलता था। यथा–

किमपि किमपि मन्दं मन्दमासत्तियोगादविरलितकपोलं जल्पतोरक्रमेण।
अशिथिलपरिरम्भव्यापृतैकैकदोष्णो रविदितगतयामा रात्रिरेव व्यरंसीत्।।[4]

राम–सीता के मध्य प्रेम का यह कितना सुन्दर वर्णन किया गया है जब सीता का स्मरण करके राम बेहोश हो जाते हैं तब तमसा, सीता से कहती है कि हे कल्याणी। आप ही जगत् के स्वामी श्रीराम को होश में ला सकती हो, क्योंकि तुम्हारे हाथों का स्पर्श ही इन्हें प्रिय है और उसी के अभ्यस्त हैं। यथा–

त्वमेव ननु कल्याणि संजीवय जगत्पतिम्।
प्रियस्पर्शो हि पाणिस्ते तत्रैव निरतो जनः।।[5]

सीता के स्पर्श से श्री राम होश में आते हैं सर्वत्र देखने पर जब उन्हें कोई भी दिखाई नहीं दिया तो वह कहते हैं कि स्नेहाधिक्य से आर्द्र होने के कारण तुम्हारा शीतल–स्पर्श मूर्तिमान् अनुग्रह की भान्ति मुझे अब भी आनन्दित कर रहा है, किन्तु हे! आनन्दित करने वाली आप कहाँ हो? यथा–

प्रसाद इव मूर्तस्ते स्पर्षः स्नेहार्द्र शीतलः।
अद्याप्यानन्दयति मां त्वं पुनः क्वासि नन्दिनि।।[6]

अन्यत्र सीता के स्पर्श के बारे में श्री राम कहते हैं– ''तुम्हारे प्रत्येक स्पर्श से इन्द्रियों को मूढ़ करने वाला विकार, मेरी चेतना को कभी अन्धकारमय कर लेता है और कभी प्रकाशित कर देता है। अर्थात् यह सुख है या दुःख, मूर्च्छा या निद्रा है, विष है या मादक द्रव्य से उत्पन्न नशा है इसका निश्चय कर पाना अत्यन्त कठिन है। यथा–

विनिश्चेतुं शक्यो न सुखमिति वा दुःखमिति वा।
प्रमोहो निद्रा वा किमु विषविसर्पः किमु मदः।
तव स्पर्षे स्पर्षे मम हि परिमूढ़ेन्द्रियगणो–
विकारश्चैतन्यं भ्रमयति च संमीलयति च।।[7]

एक बार सीता आराम करने के लिए सिरहाना ढूंढने लगती है। राम सीता को कहते हैं क्या ढूंढ रही हो? सिरहाने की कोई आवश्यकता नहीं। यह मेरा बाहु आपका सिरहाना ही है। वह कहते हैं– ''विवाह के समय से लेकर कुमारावस्था में तदनन्तर यौवनकाल में पुनः वन में शयन का प्रधान साधन और जिसे आज तक आपके अतिरिक्त अन्य स्त्री को सेवित करने का सौभाग्य नहीं मिला है ऐसा राम का यह हाथ आपके लिए सिरहाना है।[8] जब सीता थकावट के कारण सो जाती है तब सोई हुई सीता को राम स्नेहपूर्वक देखकर कहते हैं कि वह सीता मेरे घर की लक्ष्मी है, मेरे नेत्रों के लिए अमृतकी शलाका है इसका स्पर्श मेरे शरीर के लिए चन्दन लेप के समान शीतल है। मेरे कण्ठ में पड़ी यह भुजा शीतल कोमल मुक्ता की माला के समान है। इसकी प्रत्येक वस्तु मुझे अतीव प्रिय है। परन्तु इसका वियोग मेरे लिए परमासहनीय है।[9] राम का सीता के प्रति बहुत अधिक प्रेम है, जब वह सीता का परित्याग करने लगते हैं, तो वह अपने आप को बधिक कहते हैं, जिस प्रकार कोई वधिक बचपन से पाली हुई चिड़िया को मृत्यु के हाथ में सौंप देता है, उसी प्रकार मैं भी सीता का परित्याग छल से कर रहा हूँ। यथा–

शैशवात्प्रभृति पोषितां प्रियां सौहृदादपृथगाश्रयामिमाम्।
छद्मना परिददामि मृत्यवे सौनिको गृहशकुन्तिकामिव।।[10]

सीता जब राम के हाथ पर सो रही थी, तो राम अपने आप को कौसते हुए कहते हैं कि अरे भोली सीते! अधिक निन्दित कर्म करने के कारण चाण्डाल मुझे छोड़ो। तुम चन्दन के विश्वास से भयंकर विष वृक्ष को ग्रहण कर रही हो।[11] विश्वास पूर्वक छाती पर सोई हुई, घर की लक्ष्मी प्रिय पत्नी को नृशंसा होकर मांसाहारी हिंसक जीवों में बलि के टुकड़ों की भान्ति फैंक रहा हूँ। इससे अधिक और क्या क्रूरता हो सकती है कि मुझ पर पूर्ण विश्वास रखने वाली गुणवती एवं गर्भिणी पत्नी को मैं माँस खाने वाले जीवों के सामने बलि के टुकड़ों की भाँति फैंक रहा हूँ। यथा–

विस्रम्भादुरसि निपत्य लब्धनिद्रा–मुन्मुच्य प्रियगृहिणींगृहस्य शोभाम्।
आतंकस्फुरितकठोरगर्भगुर्वी क्रव्यादभ्यो बलिमिव निर्घृणः क्षिपामि।।[12]

राम का सीता के प्रति अगाध प्रेम प्रदर्शित होता है। जिन स्थानों पर राम ने सीता के साथ समय बिताया था, उन–उन स्थानों पर राम, सीता का स्मरण करते हुए कहते हैं– मैंने आज पुनः इस वन को क्यों देख लिया, जिसमें चिरकाल रहकर हमने वानप्रस्थ तथा गृहस्थ जीवन के प्रत्येक सुख–दुःख का अनुभव किया था। यथा–

एतत्तदेवहि वनं पुनरद्य दृष्टं यस्मिन्नभूम चिरमेव पुरा बसन्तः।
आरण्यकाष्च गृहिणष्च रताः स्वधर्मे सांसारिकेषु च सुखेषु वयं रसज्ञाः।।[13]

एक साथ बिताये हुए आनन्दपूर्वक दिनों को याद करते हुए राम कहते हैं कि मयूरो के कूजन से युक्त यह वही पर्वत है यह मस्त हरिणियों के विहार स्थान वहीं वनस्थल हैं तथा वही सरिताओं के तट, सर्वाङ्ग सुन्दर वेंत की लताएं, सघन कदम्ब एवं हिज्वल नामक वृक्षों से सम्पन्न यह वही पर्वत है यहाँ हमने आनन्दपूर्वक दिन बिताये हैं। यथा–

एतेत एव गिरयो विरुवन्मयूरा स्तान्येव मत्तहरिणानिवनस्थलानि।
आमञ्जुवञ्जुललतानि च तान्यमूनि नीरन्ध्रनीलनिचुलानि सरित्तटानि।।[14]

इसके पश्चात् प्रस्रवण पर्वत, गोदावरी नदी के तट पर पर्णकुटी में आनन्दपूर्वक निवास करते हुए गोदावरी के जल में वृक्षों की छाया में रमणीय समय व्यतीत किया था अब यह पञ्चवटी मुझे छोड़ नहीं रही मुझे बलपूर्वक खींच रही है। अत्यन्त दुःखी हृदय के साथ राम कहते हैं कि जिस पञ्चवटी में मैंने सीता के साथ अपने घर की भान्ति समय बिताया था जहाँ पर हम बहुत लम्बी–लम्बी चर्चाएं करते थे, आज प्रियतमा का विनाश करने वाला, राम किस पाप के कारण इस पञ्चवटी को देख रहा है। अर्थात् इसे कैसे देखूँ?[15] राम निर्दोष सीता के निर्वासन से दुःखी हो रहे हैं। जब कि सीता का राम द्वारा निर्वासन किया गया था, तब भी प्रस्तुत कथन द्वारा राम के सीता के प्रति प्रेम का पता चलता है। राम सीता से अत्यन्त प्रेम करते थे और सीता भी राम से अत्याधिक प्रेम करती थी इसी भाव से सीता जहाँ कहती है कि मुझे मन्दभागिनी का नाम लेकर नीलकमल सदृश नेत्र बन्द कर आर्यपुत्र मूर्च्छित हो गए हैं। श्वास रूकने से शक्तिहीन होकर पृथ्वी पर कैसे गिर पड़े हैं। हे भगवति! इनकी रक्षा करो और आर्यपुत्र को सचेत कर दो। यथा–

हा धिक् हा धिक्! मां मन्दभगिनीं व्याहृत्यामीलितनेत्रनीलोत्पलो मूर्च्छित एव! आर्यपुत्र हा!, कथं धरणिपृष्ठे निरूद्धनिःश्वासनिः सहंविपर्यस्तः भवावतितमसे परित्रायस्व, जीवयार्यपुत्रम्।।[16]

सीता का श्री राम से इतना अगाध प्रेम है कि वह मूर्च्छित होने पर सीता जी के स्पर्श से ही सचेत होते थे। अर्थात् भगवति सीता से कहती है कि हे कल्याणी। तुम ही जगत्पति को सचेत करो। क्योंकि तुम्हारे हाथ का स्पर्श बड़ा ही प्रिय है और ये उसी के अभ्यस्त हैं। यहाँ यह भी पता चलता है कि राम का जीवन कितना पवित्र एवं उच्च चरित्रवान है जो कि सीता के ही स्पर्श के अभ्यस्त बताए गए हैं। यथा–

त्वमेव ननु कल्याणि संजीवय जगत्पतिम्।
प्रियस्पर्शो हि पाणिस्ते तत्रैष निरतो जनः।।[17]

सीता के स्पर्श करने से जब राम मूर्च्छित अवस्था से सचेत अवस्था में आते हैं तो सीता हर्ष के साथ कहती हैं– मैं समझती हूँ कि तीनों लोकों का जीवन फिर से लौट आया है। अर्थात् जगत्पति राम के जीवित होने पर जगत् ही जी गया सीता कहती हैं कि इस समय मेरे लिए इतना ही बहुत है। मुझ निर्वासित को तो दर्शन में भी सन्देह था, स्पर्श की तो बात ही क्या? परन्तु इस समय मैंने इनका स्पर्श भी कर लिया और दर्शन का आनन्द भी ले लिया है। मेरे लिए यही पर्याप्त है। यथा–

जाने पुनः प्रत्यागतमिव जीवितं त्रैलोक्यस्य।
एतावदेवेदानीं मम बहुतरम्।।[18]

तत्पश्चात् सीता जब राम का स्पर्श करती है तो इस प्रकार कहती हैं– दूसरे जन्म में भी अब जिनके दर्शनों की सम्भावना नहीं थी, जिनका दर्शन में निर्वासन के पश्चात् सर्वथा दुर्लभ था, आज मुझ मन्दभागिनी को स्मरण कर स्नेह से ऐसा कहने वाले आर्यपुत्र पर वज्रमयी मैं कठोर कैसे हो सकती हूँ? मैं ही इनका हृदय जानती हूँ और वह मेरा हृदय जानते हैं। यथा–

किमिति वज्रमयी जन्मान्तरेष्वपिपुनरप्यसम्भावितदुर्लभदर्षनस्य मामेव मन्दभागिनीमुद्दिष्यैवं वत्सलस्यैवं वादिन आर्यपुत्रस्योपरि निरनुक्रोषा भविष्यामि अहमेतस्य हृदयं जानामि, ममाप्येषः।।[19]

जब सीता के स्पर्श से मूर्च्छित राम मूर्च्छा से जाग उठते हैं तो राम को बहुत आश्चर्य होता है। वह इस आश्चर्य में कहते हैं– क्या मेरे हृदय पर यह हरिचन्दन के नवपल्लवों का रस है? अथवा चन्द्रमा के किरणरूपी अङ्कुरों को निचोड़ कर उनके रस से किया गया सेक है। मेरे सन्तप्त मन और प्राण को तृप्त करने वाली यह ''संजीवनी'' औषधि का रस ही विशेष रूप से सींच दिया है। संजीवनी का हेतु एवं मन को तृप्त करने वाला यह पूर्व परिचित स्पर्श निश्चय ही वही है जो मेरे सभी प्रकार के सन्ताप को दूर करने में सक्षम है। यथा–

आश्च्योतनं नु हरिचन्दनपल्लवानां निष्पीडितेन्दुकरकन्दलजो नु सेक आतप्तजीवित पुनः परितर्पणोऽयं संजीवनौषधिरसो नु हृदिप्रसिक्तः।।[20]

सीता का राम के प्रति रस अगाध एवं सहज प्रेम का निर्देश छठे अंक में मिलता है जब राम के साथ कुश का वार्तालाप चल रहा है। उस समय वाल्मीकि द्वारा जो रामायण पाठ कुश–लव को पढ़ाया गया था उसके कुछ अंश जो राम–सीता के प्रेम को प्रदर्शित करते हैं। वह कुश द्वारा कहे गए हैं। राम बड़ी उत्सुकतावश उन पंक्तियों को सुनते हैं। कुश कहते हैं– स्वभाव से ही सीता भगवान् राम की बहुत प्रिय थी। वह प्रेम सीता से अपने गुणों द्वारा ही बढ़ाया गया था। उसी प्रकार राम भी सीता को प्राणों से अधिक प्रिय थे। अर्थात् एक–दूसरे का हृदय ही परस्पर के प्रेम सम्बन्ध को जानता है। यथा–

प्रकृत्यैव प्रिय सीता रामस्यासीन्महात्मनः।
प्रियभावः स तु तया स्वगुणैरैव वर्धितः।।
तथैव रामः सीतायाः प्राणेभ्योऽपि प्रियोऽभवत्।
हृदयं त्वेव जानाति प्रीतियोगं परस्परम्।।[21]

तृतीयांक में राम–सीता के दाम्पत्य जीवन की श्रेष्ठता की पराकाष्ठा के दर्शन होते हैं। जब सीता को राम की विरहव्यथा का प्रत्यक्ष होता है कि राम ने अश्वमेध यज्ञ में सीता की हिरण्यमयी प्रतिकृति को सहधर्मचारिणी के रूप में रखकर यज्ञ सम्पन्न किया था। राम के मुख से इन वचनों को सुनकर राम के प्रति सीता का सारा क्षोभ दूर हो गया और सीता के हृदय से परित्याग लज्जाशल्य निकल जाता है। इस समय सीता के हृदय में राम के प्रति और भी अधिक प्रेम उत्पन्न हो जाता है कि राम ने मेरा परित्याग सिर्फ जनापवाद के कारण महल से किया है। अपने हृदय से मेरा त्याग नहीं किया है। एक पत्नी को अपने जीवन में इससे बढ़कर और कोई आनन्द नहीं होता है कि उसके वैवाहिक जीवन में उसका पति उसे इतना प्रेम करता है। जितना प्रेम रामायण में श्री राम–सीता से करते हैं। यथा–

रामः– ''हिरण्मयी सीताप्रतिकृति।''[22]

इस प्रकार राम और सीता के आदर्श दाम्पत्य जीवन का एक श्रेष्ठ एव उच्चकोटी का प्रमाण समाज को दृष्टिगोचर होता है जिसमें राम सीता परित्याग के पश्चात् भी परस्त्री और सीता भी त्याग के पश्चात् परपुरुष की कामना हृदय में भी नहीं की है ऐसा उच्च दाम्पत्य जीवन का आदर्श भवभूति के उत्तररामचरित में अपनी विलक्षणता को प्रदर्शित करता है। अतः महाकवि भवभूति ने अपनी रचना उत्तररामचरितम् में एक आदर्श पति–पत्नी अर्थात् श्रेष्ठ दाम्पत्य जीवन का सम्बन्ध प्रस्तुत किया है। पत्नी–पति की सहधर्मचारिणी होती है। महाकवि ने उसे गृहलक्ष्मी कहकर समादृत किया है। पत्नी का अभाव जगत् के लिए अक्षुण्य है। स्त्री उस रत्नदीप की तरह है जिसके बिना यह संसार प्रकाश शून्य हो जाता है। वह समस्त संसार के लिए सुखदायिनी मानी गयी है। पति–पत्नी एक रथ के दो पहियों के समान होते हैं जैसे रथ एक पहिये से विहीन होने पर कार्यसक्षम नहीं रहता है उसी प्रकार पारिवारिक जीवन भी पति–पत्नी दोनों के बिना सम्भव नहीं है। अर्थात् परिवार समाज एवं समस्त जगत् के लिए आदर्श पति–पत्नी की भूमिका अनिवार्य है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि उत्तररामचरित नाटक में भवभूति ने महान दाम्पत्य जीवन का आदर्श प्रस्तुत किया है।

सन्दर्भ

1. उत्तरामचरित, 1/39
2. वही, 1/38
3. वही, 1/13
4. वही, 1/27
5. वही, 3/10
6. वही, 3/14
7. वही, 1/35
8. वही, 1/37
9. वही, 1/38
10. वही, 1/45
11. वही, 1/46
12. वही, 1/49
13. वही, 2/22

14. वही, 2/23
15. वही, 2/24, 25, 28
16. वही, तृतीय अंक, पृष्ठ 233
17. वही, 3/10
18. वही, तृतीय अंक, पृष्ठ 235, 237
19. वही, तृतीय अंक, पृष्ठ 239
20. वही, 3/11–12
21. वही, 6/31–32
22. वही, तृतीय अंक, पृष्ठ 311